P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

ऋग्वेदीय संवाद सूक्तों में शैक्षिक मूल्यः वर्तमान शिक्षा के विशेष सन्दर्भ में

गीता कोरानी
शोधछात्रः
संस्कृतम् विभागः,
सम्राट–पृथ्वीराज–चौहानः
राजकीय–महाविद्यालयः,
अजयमेरुः, राजस्थान, भारत

आशुतोष पारीकः
सहायक आचार्य एवं
शोधनिर्देशकः,
संस्कृतम् विभागः,
सम्राट–पृथ्वीराज–चौहानः
राजकीय–महाविद्यालयः,
अजयमेरुः, राजस्थान, भारत

सारांश

शिक्षा शब्द की उत्त्पति 'शिक्ष्–शिक्षणे' से हुई है, जिसका अर्थ है– ज्ञान प्राप्त करना। शिक्षा हमें इस योग्य बनाती है कि हम अपने वातावरण में समायोजित होकर अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं का पूर्ण विकास कर अपने परिवार, समाज तथा राष्ट्र के किसी विशिष्ट क्षेत्र में योगदान दे सके। शिक्षा का उद्देश्य शिष्य के ज्ञान एवं व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाना है। शिक्षा शिक्षार्थी के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में और उसमें स्वस्थ दृष्टिकोण एवं अच्छे संस्कार सम्मिलित करने में सहायक होती है। विश्व साहित्य में अनेकत्र आख्यानों का प्रयोग हुआ है। इन आख्यानों के नैतिक आदर्शों एवं शिक्षाओं को अपनाया जाता रहा है। प्राचीन आख्यानों को केवल कपोल कल्पना मानकर उनकी उपेक्षा करना उचित नहीं। उनके सूक्ष्म अध्ययन के द्वारा उनके मूल में निहित रहस्य, विचार अथवा तथ्य को समझने की नितान्त आवश्यकता है अथवा ऐसा कहें कि इन आख्यानों का अपना सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक तथा शैक्षिक महत्त्व है। इन आख्यानों की शिक्षा के माध्यम से ही संचित ज्ञान को आने वाली पीढ़ियों को हस्तांतरित किया जा सकता है, और उसमें वृद्धि की जा सकती है।

मुख्य शब्द : ऋग्वेदीय आख्यान, शिक्षा, समाज, धर्म, पुरुरवा–उर्वशी, यम–यमी, सरमा–पणि, विश्वामित्र–नदी, इन्द्र–अगस्त्य, घोषा, अपाला, इन्द्र–अगस्त्य, रोमशा–भाव्यवय।

प्रस्तावना

ओ३म् असतो मा सद्गमय,
तमसो मा ज्योतिर्गमय,
मृत्योर्माऽमृतं गमय।।[1]

जो इस आदर्श वाक्य की पूर्ति करे वही शिक्षा वास्तव में शिक्षा है। आज शिक्षा हमें जिन विविध कार्यो के योग्य बनाती है उनका सम्बन्ध भौतिक अथवा सांसारिक क्षेत्र से ही है। भौतिक शिक्षा प्रायः भौतिकवाद की ही पहचान करवा पा रही है ना कि मनुष्य के भीतर निहित शक्तियों की। वर्तमान जगत् में शिक्षा के दृष्टिकोण व लक्ष्य निरन्तर बदल रहे हैं। और यही कारक है कि हमारी वर्तमान शिक्षा के प्रयोजन को लेकर हम आश्वस्त नहीं हैं। वर्तमानकालीन शिक्षा का उदेश्य आज हमारे सामने एक ज्वलन्त समस्या है। क्या हमको केवल शासन के कार्यो की पूर्ति के लिए कर्मचारियों को ही उत्पन्न करना है? या कारखानों के लिए मजदूरों को तैयार करना है अथवा पेट भरने के लिए व्यवसाय करने वालों को तैयार करना है? आज समाज में चारों ओर नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों में गिरावट आ रही है। लोगों में अनुशासनहीनता, श्रम के प्रति अविश्वास, उदासीनता, अनुत्तरदायित्व की भावनाओं ने घर बना लिया है। अतः समाज में गुणात्मक सुधार की आशा के रूप में मूल्यपरक शिक्षा की नितान्त आवश्यकता को महसूस किया जा रहा है। वेद शिक्षा के इस प्रयोजन को स्पष्ट शब्दों में प्रस्तुत करता है।

"विद्ययाऽमृतमश्नुते"[2]

विद्या से अमृत अमरणभाव, जन्म–मरण के बन्धन से मोक्ष की प्राप्ति होती है। क्या वर्तमान शिक्षा इस परम लक्ष्य के थोड़ा भी निकट पहुँचाने की सामर्थ्य रखती है? इस संसार में रहते हुए हमें सांसारिक कार्यों को भी पूर्ण करना चाहिए परन्तु इसमें इतना मग्न नहीं होना चाहिए कि हम अपने मूल प्रयोजनों से ही भटक जावें तथा अविद्या से ही ग्रस्त रहें। वेद अविद्या से प्राप्त होने वाले फलों को स्पष्ट करता है–

"अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।।"[3]

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-4*(Part-2) December- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

यजुर्वेद ने जीवन व्यवहार की शिक्षा के पाठ्यक्रम को बड़े ही सुन्दर रूप में प्रस्तुत कर पालन करने का उपदेश दिया है–

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथाः मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।।"[4]

इस मन्त्र से यह शिक्षा प्राप्त होती है कि इस समस्त संसार की छोटी से छोटी गति एवं स्थिति में और इस विशाल संसार के बाहर भी सब ओर परमात्मा व्याप्त है।

सरस्वती शब्द जिसका अर्थ शिक्षा से लिया जाता है इसका निर्माण 'सृ गतौ' धातु से होता है इससे स्पष्ट है कि जो गति दे अर्थात जो बुद्धि को गति प्रदान करे, आगे ले जाए उसे ही हम सरस्वती या शिक्षा कहते हैं। "गतेस्त्रयोऽर्थाः ज्ञानं, गमनं प्राप्तिश्चेति।"[5] गति शब्द का अर्थ ज्ञान, गमन और प्राप्ति रूप में होता है। अतः व्यक्ति की बुद्धि को अत्यन्त तीक्ष्ण बनाना, उसे वृद्धि या उन्नति की ओर अग्रसर करना, महान बनाना तथा सौभाग्य के लिए प्रबुद्ध करना ये सभी शिक्षा के उद्देश्य हों। "शिक्षा उस ब्रह्मास्त्र की तरह है जिसका प्रयोग कर हम इस पूरी दुनिया को बदल सकते हैं।"[6] वैसे तो सम्पूर्ण वेद ही शिक्षा के आकार हैं किन्तु शैक्षिक मूल्यों के दृष्टि से ऋग्वेदीय संवाद सूक्तों का विशेष महत्त्व है। ऋग्वेद में प्रमुखतया 20 आख्यान अथवा संवाद सूक्तों का वर्णन प्राप्त होता है। जैसे कि पुरुरवा–उर्वशी,[7] सरमा–पणि,[8] विश्वामित्र–नदी,[9] यम–यमी,[10] अगस्त्य लोपामुद्रा[11], त्रित आख्यान[12], सरण्यु विवस्वान[13], इन्द्र अगस्त्य[14], इन्द्र अदिति वामदेव[15], देवापि और शन्तनु[16], विश्वकर्मा भौवन[17], मुद्गल भार्म्यश्व[18], अपाला आख्यान[19], घोषा आख्यान[20], आत्रेयी अपाला[21] इत्यादि। ये आख्यान किसी एक व्यक्ति का निर्देश न करके किसी विशेष अर्थ को हमारे सामने प्रकट करते हैं। वेदों के ये आख्यान हमारे जीवन को अपनी शिक्षाओं के द्वारा प्रभावित करते हैं। हमारे भीतर नैतिक मूल्यों एवं सुसंस्कारों को जन्म देते हैं। ये आख्यान मात्र उपदेश नहीं देते अपितु हमारे अन्दर एक विचार उत्पन्न करते हैं और हमें उस सत्–असत् से परिचित कराकर हमारे मन–मस्तिष्क पर अपनी अटल छवि भी बनाते हैं। ये कथाएं केवल देवों–दानवों, ऋषि–मुनियों एवं राजाओं की ही नहीं हैं बल्कि समस्त जड़ चेतन, पशु–पक्षी आदि से सम्बन्धित हैं, जो हमें हमारे कर्तव्य–कर्मों का बोध कराती हुई शाश्वत–कल्याण का मार्ग दर्शन कराती हैं। ये आख्यान भूसे में लिपटे हुए दाने के समान हैं। आख्यानों में सरलता और सरसता दोनों ही तत्त्वों की प्रधानता होने से इनको सुनने तथा पढ़ने में मन लगता है और ये देर तक याद भी रहते हैं। प्रत्येक आख्यान मन व हृदय को किसी न किसी शैक्षिक मूल्य से परिचित कराता है। इनके अनुशीलन से प्रत्येक मनुष्य अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है और अपने निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ती हेतु इनकी सहायता ले सकता है।

विविध आख्यान तथा उनसे प्राप्त शिक्षा

पुरुरवा–उर्वशी संवाद सूक्त

इस संवाद सूक्त के माध्यम से पति–पत्नी के कर्तव्यों, दायित्वों, उनके गृहस्थ जीवन तथा राजा व प्रजा के सम्बन्धों उनके कर्त्तव्याधिकार विषयक शिक्षा प्राप्त की जा सकती है। मनुस्मृतिकार द्वारा गृहस्थ की महत्ता के प्रतिपादक के मूल में सम्भवतः ऐसे ही सूक्त रहे होंगे।

"यथा वायुं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तवः।
तथा गृहस्थं आश्रित्य वर्तन्ते सर्व आश्रमाः।।"[22]

अर्थात् जिस प्रकार वायु के बिना प्राणियों का जीवन नहीं चल सकता उसी प्रकार गृहस्थ आश्रम के बिना तीनों आश्रम नहीं चल सकते हैं। यह सूक्त न सिर्फ अपने राजनीतिक, वैज्ञानिक, सामाजिक व्याख्याओं को स्पष्ट करता है, अपितु इसका स्वरूप शैक्षिक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। इस सूक्त में जो पति–पत्नी के कर्तव्यों की व्याख्या की गई है वह आज के समाज के लिए भी विशिष्ट योग्यता रखती है तथा समाज के सामने आदर्श पति–पत्नी का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करती है–

"हये जाये मनसा तिष्ठ घोरे वंचासि मिश्रा कृणवावहे नु।
न नौ मन्त्रा अनुदितास एते मयस्करूपतरे चनाहन।।" [23]
"किमेता वाचा कृणवा तवाहं प्राक्रभिषमुषसामग्रियेव।
पुरुरवः पुनरस्तं परेहि दुरापना वातइवाहमस्मि।।"[24]

इस प्रकार इन मन्त्रों में समाज के समक्ष एक उदाहरण प्रस्तुत किया गया है कि आज के वैज्ञानिक युग में जहाँ दाम्पत्य जीवन व्यतीत करना दुष्कर है वही इन मन्त्रों से शिक्षा प्राप्त कर प्रत्येक दम्पत्ति अपना वैवाहिक जीवन सुखमय बना सकता है तथा जीवन पर्यन्त एक दूसरे का साथ निभा सकता है।

यम–यमी आख्यान

ऋग्वेद का यह सूक्त यौन सम्बन्धों एवं सामाजिक विवाह–मर्यादा को निर्धारित करने वाला महत्त्वपूर्ण सूक्त है। वेद के द्वारा मानव मन की अतिस्वाभाविक स्थिति एवं परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए इस सूक्त को रोचक शैली में प्रस्तुत किया है। वेद का आदेश है कि सहोदरों तथा अतिनिकट सम्बन्धियों में विवाह और यौन सम्बन्ध स्थापित नहीं होने चाहिए। जैसा कि सूक्त की व्याख्या में प्राप्त होता यमी यम से स्वयं के साथ यौन सम्बन्ध स्थापित करने को कहती है तथा यम इसे अस्वीकार करते हुए इसे अनुचित मानता है–

"ओ चित्सखायं सख्या ववृत्यां तिरः पुरू चिदर्णवं जगन्वान्।
पितुर्नपातमा दधीत वेधा अधि क्षमि प्रतरं दीध्यानः।।"[25]
"न ते सखा सख्यं वष्टयेतत्सलक्ष्मा यद्विषरूपा भवाति।
महस्पुत्रासो असुरस्य वीरा दिवो धर्तरि उर्विया परिख्यन्।।"[26]

एकान्त पाकर कामभावना निकट सम्बन्धियों को भी अपने मार्ग से भ्रष्ट कर देती है तथा मनुष्य अपना विवेक खो बैठता है इस प्रकार का विवेचन मनुस्मृति में भी प्राप्त होता है–

"मात्रा स्वस्त्रा दुहिता वान विविक्तासनो भवेत्।
बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति।।" [27]

वेद की यह भी शिक्षा है कि संसार में कोई स्थान ऐसा नहीं है जहाँ ईश्वर विद्यमान न हो। ईश्वर सभी पदार्थों में विद्यमान रहता हुआ इस संसार के प्रत्येक

प्राणी पर दृष्टि रखता है। सूक्त के इस भाव को वेद तथा मनुस्मृति में भी इस प्रकार प्रकट किया गया है–

"तदेजति तन्नैजति तद् दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः।।"[28]
"मन्यन्ते वै पापकृतो न कश्चित् पश्यतीति नः।
तांस्तु देवाः प्रविश्यन्ति स्वस्यैरान्तरपूरुषः।।"[29]

इस प्रकार ये यह सूक्त यौन सम्बन्धों तथा यौन शिक्षा से सम्बन्धित तथा ईश्वर की उपस्थिति की शिक्षा प्रदान कर आज के युवा समाज को अपने शिक्षाप्रद विचारों से अनुप्रमाणित करता है।

इन्द्र–अगस्त्य आख्यान

यह सूक्त हमें यह शिक्षा प्रदान करता है कि धर्म में विलम्ब करना अनुचित है। इन्द्र अगस्त्य ऋषि के संवाद में धर्म का गूढ़ रहस्य बताते हुए कहा है कि किसी भी धार्मिक कार्य को करने में कभी भी विलम्ब नहीं करना चाहिए। इसका कारण यह है कि चित्त बड़ा चंचल स्वभाव का होता है। अभी धर्म को करने का निश्चय करने वाला यह मन दूसरे ही क्षण नष्ट हो जाता है। यहाँ चित्त की चंचलताओं को लक्षित कर ऐसा शिक्षाप्रद उपदेश दिया है कि मृत्यु आपकी कभी प्रतीक्षा नहीं करेगी कि आपने अपने कार्य पूरे किये हैं अथवा नहीं। कोई भी कार्य हो उसे समय रहते पूरा कर लेना चाहिए अन्यथा पहले तो आपका मन आपको धोखा देगा उसके पश्चात् मृत्यु आपका घात करेगी।

"काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में पलय होएगी, बहुरी करेगा कब"।। [30]

इस सूक्त में समय के महत्त्व को इंगित किया गया है। आलस्य–प्रमाद से रहित होकर मनुष्य को शास्त्रनिहित समस्त अवश्यकरणीय कर्मों में सदैव तत्पर रहना चाहिए, क्षणमात्र के लिए भी उनमें शिथिलता नहीं करनी चाहिए।

विश्वामित्र–नदी संवाद सूक्त

वेद प्रत्येक जड़ में उसके अभिमानी देवता का होना मानता है। भगवान राम ने समुद्र से प्रार्थना की थी कि वह उन्हें लंका जाने के लिये मार्ग दे दे। देवता समुद्र ने उनकी प्रार्थना सुनी थी और लंका पहुँचने के लिए उपाय भी बताया था।[31] इसी प्रकार विश्वामित्र नदी संवाद सूक्त में विश्वामित्र शतद्रू तथा विपाशा नदी से प्रार्थना करते है कि वे उन्हें आगे जाने का मार्ग प्रदान करे।

"प्र पर्वतानामुशती अपस्थदश्वेइव विषिते हासमाने।
गवेव शुभ्रे मातरा रिहाणे विपाट् छुतुद्री पयसा जवेते।।" [32]

ये नदियाँ उनकी प्रार्थना से प्रसन्न होकर उन्हें मार्ग प्रदान भी करती हैं। इस सूक्त से यह शिक्षा ग्रहण की जा सकती है यह पर्यावरण मनुष्य के लिए सदैव हितैषी रहा है। मनुष्य पर्यावरण के जड़ पदार्थों के साथ किस प्रकार अपने सम्बन्ध स्थापित करता है यदि मनुष्य पर्यावरण को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाता उनका संरक्षण करता है तो पर्यावरण भी उसे इसके बदले में लाभ ही देता है। किन्तु अगर वह उसे नुकसान पहुँचाता है तो पर्यावरण भी उसका सर्वनाश कर सकता है। इसी कारण हमें प्रकृति के साथ मित्रवत् व्यवहार करने की आवश्यकता है। "पृथ्वी सभी मनुष्यों की जरूरत पूरी करने के लिए पर्याप्त संसाधन प्रदान करती है, लेकिन लालच पूरा करने के लिए नहीं।"[33]

सरमा –पणि संवाद सूक्त

वृष्टिरोधक प्राकृतिक शक्तियों का इन्द्र और बृहस्पति किस प्रकार विनाश करते हैं, इस प्राकृतिक घटना का दृष्टांत प्रस्तुत कर वेद में आवश्यक वस्तुओं की जमाखोरी उन्हें छिपानेवाले तथा इस प्रकार के कार्यो से जनता को अभावों से पीडित करने वाले वणिकों की निन्दा की गई है। उन्हें आसुरी प्रवृत्तियों का प्रतीक कहा गया है। राज्य के राजा तथा नेता को यह शिक्षा दी गई है कि ऐसे आसुरी कार्य करने वाले व्यक्ति बिना शक्तिप्रयोग के नहीं मानते, अतः ऐसे वणिकों द्वारा छिपाए हुए धन और पदार्थों की गुप्तचरों द्वारा खोज कराए तथा शक्ति का प्रयोग कर उन्हें अपने अधिकार में लेवें तथा जनता के हित में उनका प्रयोग करें। यह एक राजनीतिक सूक्त है। इसमें इन्द्र का अर्थ राजा है। गौएँ राष्ट्र के धन–धान्य का प्रतीक हैं। जिन्हें पणि अर्थात् व्यापारी वर्ग, वणिक्, कृपण व्यक्ति चोरी कर लेते हैं जिससे राष्ट्र में धन का अभाव हो जाता है।

"नहं वेद भ्रातृत्वं नो स्वसृत्वमिन्द्रो विदुीगिरसश्च घोशः।
गेकामा में अच्छदयन्यदायमपात इत पणयो वरीयः।।"[34]

सरमा देवशुनी है। देव राजा को कहते है। यह राजा के लिए राष्ट्र में विचरण करती है जिस प्रकार से गुप्तचर विचरण करते हैं तथा छिपे हुए धन का पता लगाते हैं।

"दूतं चैव प्रकुर्वीत सर्वशास्त्रविशारदम्।
इंगिताकारचेष्टज्ञं शुचिं दक्षं कुलोद्गतम।।" [35]

राजा का कर्तव्य है कि दूतों के द्वारा धन का पता लगाए तथा जनहित के कार्य करे। इस सूक्त में दूतों के कर्तव्य बताए गए हैं तथा उद्यमशीलता की प्रवृत्ति को अपनाने की शिक्षा दी गई है। चोरी को महापाप बताया गया है। चोरी करने वाला व्यक्ति दण्ड का हकदार होता है आज नही तो कल उसे अपने कर्मो का फल अवश्य ही प्राप्त होता है।

सुकन्या–च्यवन ऋषि

इस सूक्त में कन्या धर्म पालन की शिक्षा प्राप्त होती है। जिस प्रकार पुत्र का कर्तव्य है कि वह अपने पिता के वचनो का पालन करें। वैसे ही कन्या का भी कर्तव्य है कि वह सभी परिस्थितियों में अपने पिता के वचनों का पालन करें। सुकन्या ने बहुत ही धीरता के साथ अपने धर्म का पालन किया। तथा इसका परिणाम बहुत ही अच्छा हुआ। अश्विनी कुमार भी सुकन्या के धर्म पालन से बहुत संतुष्ट थे।

'सा होवाच यस्मै मां पिताऽडदान्नैवाहं तं जीवनं हास्मामीति'

अगस्त्य–लोपामुद्रा आख्यान

तपस्वी जीवन और गृहस्थ जीवन में संयम और भोग में सामंजस्य एवं समन्वय का संदेश देनेवाला यह अद्भुत सूक्त है। यहाँ यह दर्शाया गया है कि तपस्या कभी निष्फल नहीं जाती। तपस्या से शरीर का नैराग्य, यश, बल, पुत्र आदि की प्राप्ति होती है, आयु में भी वृद्धि होती है। यहाँ गृहस्थ धर्म के साथ–साथ संयम और आत्मनियन्त्रण भी आवश्यक बताया गया है। महर्षि मनु ने भी संयमपूर्वक गृहस्थ सेवन का विधान करते हुए कहा है कि 'पुरुष को सदा स्ववार में रत रहते हुए ऋतुकाल में समागम करना चाहिए। पर्व दिनों को छोड़कर रतिकामना से गमन करनेवाला गृहस्थ ब्रह्मचारी के सदृश ही होता

है।' इन समन्वित पथ का अनुसरण करनेवाला प्रत्येक गृहस्थ उक्त गुणों को प्राप्त कर लेता है।

घोषा, अपाला, रोमशा–भाव्यवय का आख्यान

इस सूक्त में भक्ति की महिमा का व्याख्यान किया गया है। भक्त की प्रार्थना कभी व्यर्थ नहीं जाती। भक्तों पर अनुकम्पा करना देवताओं का सहज धर्म है। घोषा ने अश्विनों को शुभस्पती रूप में स्मरण किया तथा अपाला ने इन्द्र की मन्त्रों के द्वारा स्तुति की। उनकी प्रार्थना को सुनकर अश्विन कुमार तथा इन्द्र उन पर प्रसन्न हो गये तथा घोषा तथा अपाला को उनके स्तुतय देवताओं के द्वारा रोगमुक्त, नवीन अवस्था वाली और सुन्दरी बना दिया गया तथा उनकी मनोवांछा को पूर्ण किया गया। इन सूक्तों से यह शिक्षा प्राप्त कि जा सकती है कि भक्ति में ही शक्ति है। भक्ति का तात्पर्य भगवान् के ध्यान, भजन अर्चना तथा उपासना आदि से है। परमात्मा के अतिरिक्त किसी दूसरे का भाव मन में न लाना ही भक्तियोग है–

"अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः।।"[36]

त्रित आख्यान

इस सूक्त में लोभ का वर्णन किया गया है। लोभ की महिमा अपान है। लोभवश मनुष्य क्या–क्या कुकर्म नहीं कर डालता। अधिकांश अनर्थों की जड़ प्रायः लोभ ही है। यह ऐसा रोग है जो विवेक की जड़ को खोद डालता है। विचार का नाश कर डालता है, बुद्धि को निष्प्रभ कर देता है। और अन्ततोगत्वा मनुष्य को दुःख–सागर में डुबो देता है। लोभवश व्यक्ति भयकर से भयंकर कूरता करने में भी नहीं हिचकते है। भगवद्गीता में लोभ का वर्णन कुछ इसी प्रकार से किया गया है–

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारम् नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत।।[37]

इसी क्रूर लोभ से अविष्ट प्राणियों के चंगुल में महर्षि त्रित भी पड़ जाते है। त्रित के सहोदर एकत्व तथा द्वित्व लोभ वश उनकी गायें लेकर तथा उन्हें कुएँ में धकेल कर वहाँ से चले जाते है। त्रित के प्रार्थना करने पर देवता उसे कुएँ से निकाल तथा लोभियों से उनकी गायें छीनकर पुनः महर्षि को लौटा देते है। इस प्रकार यहाँ यह दर्शाया गया है कि लोभवशीभूत व्यक्ति क्या कुछ नहीं कर जाता।

इन्द्र–गृत्समद, भाव्यवय–मुदगल आख्यान

वेदों में उल्लेख है कि प्रत्येक व्यक्ति को सैन्य शिक्षा दी जाए। "राजा के लिए निर्देश है कि वह प्रत्येक व्यक्ति को युद्ध के लिए प्रशिक्षित करे।"[38] इन्द्र गृत्समद सूक्त में इन्द्र महान बलशाली बताया गया है जो युद्ध करता है तथा उसके आगे सारे शत्रु पराजित हो जाते हैं। इन्द्र की सेना में मुदगालीनी के सारथी बनने का वर्णन किया गया है। ऋग्वेद में स्त्री को शत्रुओं को नष्ट करने वाली कहा गया है।[39] इन आख्यानों से राजनीति की सैन्य शिक्षा की भी शिक्षण प्राप्त किया जा सकता है।

निष्कर्ष

अतः वर्तमान शैक्षिक संदर्भ में ऋग्वेद के विभिन्न संवाद सूक्त शिक्षाप्रद व्याख्या प्रदान करते हैं जो कि इस जीवन के मार्ग को सरल बना कर उसे उज्ज्वल बनाने में हमारा यथासंभव प्रयास कर सकते हैं। वर्तमान समाज तथा शिक्षा जगत् को सुदृढ़ उपदेश प्रदान कर ये सूक्त अपने शैक्षिक विचारों द्वारा एक उत्तम समाज को रचने में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं।

अंत टिप्पणी

1. *शतपथ ब्राह्मण, बी. बी. चौबे, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी 14.3.1.30*
2. *ईशावास्योपनिषद् , उपनिषद् रहस्य एकादशोपनिषद्, महात्मा नारायण स्वामी, विजय कुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली, 11 वाँ मंत्र*
3. *वही 9*
4. *वही 1*
5. *ऋग्वेद, पण्डित जयदेव शर्मा, डी.ए.वी. प्रकाशन विभाग 1.3.11*
6. *Education is the most powerful weapon which you can use to change the world. https://borgenproject.org>NelsonMandela*
7. *ऋग्वेदभाष्यम् पं. हरिशरण सिद्धान्तालंकार, श्री घूडमल प्रहलादकुमार आर्य धर्मार्थ न्यास, हिण्डौन सिटी (राज.)10.95*
8. *वही 10.108*
9. *वही 3.33*
10. *वही 10.10*
11. *वही 1.176*
12. *वही 1.105*
13. *वही 10.17*
14. *वही 9.150*
15. *वही 4.18*
16. *वही 10.18*
17. *वही 10.82*
18. *वही 10.102*
19. *वही 8.191*
20. *वही 1.117*
21. *वही 5.61*
22. *मनुस्मृति, मेघातिथिभाष्यसमेता, महामहोषाध्याय, प. गंगानाथ झा, परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली 3.77*
23. *ऋग्वेद, पण्डित जयदेव शर्मा, डी.ए.वी. प्रकाशन विभाग 10.95.2*
24. *वही 10.95.4*
25. *वही 10.10.1*
26. *वही 10.10.2*
27. *मनुस्मृति, मेघातिथिभाष्यसमेता, महामहोषाध्याय, प. गंगानाथ झा, परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2.290*
28. *ईशावास्योपनिषद् , उपनिषद् रहस्य एकादशोपनिषद्, महात्मा नारायण स्वामी, विजय कुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली, 5 मंत्र*
29. *मनुस्मृति, मेघातिथिभाष्यसमेता, महामहोषाध्याय, प. गंगानाथ झा, परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली 8.85*
30. *हिन्दी कबीर दोहा*
31. *"बिनय न मानत, जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति। बोले राम कोप तब भय, बिनु होइ न प्रीति।।" रामचरितमानस तुलसीदासकृत दोहा 57*

"नाथ नील नल कपि द्वौ भाई, लारिकाईं रिषि आसिष पाई।
तिन्ह के परस किएँ गिरि भारे, तरिहहि जलधि प्रताप तुम्हारें।।" रामचरितमानस तुलसीदासकृत चौपाई 1

32. *ऋग्वेद, पण्डित जयदेव शर्मा, डी.ए.वी. प्रकाशन विभाग 3.33.1*
33. *https://www.a2quotes.com>Mahatama Gandhi*
34. *ऋग्वेद, पण्डित जयदेव शर्मा, डी.ए.वी. प्रकाशन विभाग 10.108.10*
35. *मनुस्मृति, मेघातिथिभाष्यसमेता, महामहोपाध्याय, प. गंगानाथ झा, परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली 7.63*
36. *भगवद्‌गीता, कन्हैयालाल आर्य, चन्द्रवती आर्या वैदिक धर्म सत्यसाहित्य प्रकाशन गुड़गांव (हरियाणा) 2.47*
37. *वही 16. 21*
38. *विशं विशं युद्धाय सं शिशाधि। अथर्ववेद 4.31.4*
39. *"असपत्ना सपत्नहनी" ऋग्वेद 10.159.5*